2011:CGHC:7934

प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय : बिलासपुर

रिट याचिका (227) क्रमांक 63/2009

याचिकाकर्ता : पी.आर.वासन

विरुद्ध

उत्तरवादी : भारत संघ एवं अन्य

<u>भारतीय संविधान के अनुच्छेद 227 के अंतर्गत रिट याचिका</u>

(एकल पीठ : माननीय श्री एन.के.अग्रवाल न्यायाधीश)

.....

उपस्थित : याचिकाकर्ता की ओर से श्री संजय के.अग्रवाल अधिवक्ता

उत्तरवादी क्रमांक -1 की ओर से श्री नौसीना अली अधिवक्ता

.....

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

मौखिक आदेश

(दिनांक 02-02-2011 को पारित)

1. इस वर्तमान याचिका में दिनांक 26.11.2008 को जिला न्यायाधीश, बिलासपुर द्वारा पारित आदेश एम.जे.सी. प्रकरण क्रमांक 117/04 की वैधता एवं औचित्य को चुनौती दी गई है।

2. याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत संक्षिप्त तथ्यों के अनुसार:- दिनांक 09.11.2004 उत्तरवादी/रेलवे ने *मध्यस्थता एवं सुलह अधिनियम, 1996* (संक्षेप में 'अधिनियम') की धारा 34 के अंतर्गत दिनांक 02.08.2010 के मध्यस्थीय अधिनिर्णय को अपास्त कराने हेतु एक आवेदन प्रस्तुत किया। दिनांक 22.02.2006 को उत्तरवादी ने अधिनियम की धारा 34(3) के प्रावधान के अंतर्गत सात दिनों की देरी को क्षम्य करने हेतु एक आवेदन प्रस्तुत किया, जो धारा 34 के अंतर्गत आवेदन प्रस्तुत करने में हुई विलंब से संबंधित था। उपरोक्त आवेदन में यह उल्लेख किया गया है कि उत्तरवादी को 10.08.2004 को मध्यस्थीय निर्णय प्राप्त हुआ था और इस प्रकार 09.11.2004 को प्रस्तुत किया गया आवेदन समयावधि के भीतर था। किंतु, यदि यह पाया जाता है कि उत्तरवादी को मध्यस्थीय अधिनिर्णय 02.08.2004 को प्राप्त हुआ था, तो उस स्थिति में सात दिनों का विलंब माना जावेगा । जो न तो जानबूझकर की गई है और न ही किसी प्रकार की सोची-समझी देरी है।

3. अधिन अधिनस्थ न्यायालय ने आक्षेपित आदेश के माध्यम से उक्त आवेदन स्वीकार कर विलंब को क्षम्य कर दिया। अतः यह याचिका प्रस्तुत की गई है।

4. श्री संजय के. अग्रवाल, याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता , यह निवेदन किया हैं कि यद्यपि उत्तरवादी ने अधिनियम की धारा 34 के अंतर्गत आवेदन 09.11.2004 को प्रस्तुत किया था, जो सीमावधि समाप्त होने के सात दिन बाद था, किंतु चूँकि देरी क्षम्य करने का आवेदन दिनांक 22.02.2006 को प्रस्तुत किया गया, अतः विधिवत रूप से गठित धारा 34 का आवेदन दिनांक 22.02.2006 को प्रस्तुत माना जाएगा। यह तिथि धारा 34(3) के परन्तुक के अनुसार उपलब्ध विस्तारित सीमावधि की समाप्ति के काफी बाद की है।

5. अधिनियम की धारा 34(3) के अनुसार, अपास्त करने हेतु आवेदन उस तिथि से तीन माह की अवधि बीतने के पश्चात नहीं किया जा सकता, जिस दिन उस पक्षकार को मध्यस्थीय अधिनिर्णय प्राप्त हुआ हो; और यदि धारा 33 के अंतर्गत कोई अनुरोध किया गया हो, तो उस अनुरोध के मध्यस्थीय अधिकरण द्वारा निराकरण किए जाने की तिथि से तीन माह की अवधि बीतने के बाद आवेदन प्रस्तुत नहीं किया जा सकता। धारा 34(3) के परन्तुक के अनुसार, यदि न्यायालय इस बात से संतुष्ट हो कि आवेदक पर्याप्त कारणवश तीन माह की निर्धारित अवधि के भीतर आवेदन प्रस्तुत नहीं कर सका, तो वह अतिरिक्त अधिकतम तीस दिनों की अवधि के भीतर आवेदन को ग्रहण कर सकता है, परन्तु उससे आगे नहीं। यद्यपि आवेदन न तो निर्धारित सीमावधि — अर्थात् तीन माह — के भीतर प्रस्तुत किया गया है और न ही उसके पश्चात उपलब्ध अतिरिक्त तीस दिनों की अवधि के भीतर, इसलिए उत्तरवादी मध्यस्थीय निर्णय को अपास्त कराने हेतु आवेदन प्रस्तुत करने से वंचित हो जाता है। अतः, देरी क्षम्य करने का आवेदन स्वीकार करने तथा अधिनियम की धारा 34 के अंतर्गत प्रस्तुत आवेदन पर आगे कार्यवाही करने में निम्न न्यायालय ने त्रुटि की है। अपने इस तर्क के समर्थन में, उन्होंने उच्चतम न्यायालय के यूनियन ऑफ इंडिया विरुद्ध पापुलर कंस्ट्रक्शन कंपनी[1] तथा छत्तीसगढ स्टेट इलेक्ट्रिसिटी बोर्ड विरुद्ध सेंट्रल इलेक्ट्रिसिटी रेगुलेटरी कमीशन एवं अन्य[2] प्रकरण में दिए गए निर्णयों का अवलंब लिया है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

[1] 2001(8) SCC 470
[2] JT 2010 (9) SC 451

6. दूसरी ओर, उत्तवादी क्रमांक 1 की ओर से उपस्थित श्रीमती नौसीना अली, विद्वान अधिवक्ता, ने आक्षेपित आदेश का समर्थन किया और यह तर्क दिया कि उक्त आदेश को कायम रखा जाना चाहिए।

7. मैंने पक्षकारों की ओर से उपस्थित अधिवक्ताओं का तर्क को सुना हैं तथा आक्षेपित आदेश का अवलोकन किया है।

8. विचारणीय मूल प्रश्न यह है कि क्या वर्तमान प्रकरण में अधिनियम की धारा 34(3) के परन्तुक से न्यायालय पर यह प्रतिबंध उत्पन्न होता है कि यदि देरी क्षम्य करने का आवेदन, धारा 34 के अंतर्गत मुख्य आवेदन प्रस्तुत किए जाने की तिथि के बाद तथा धारा 34(3) के प्रावधान में निर्दिष्ट अतिरिक्त तीस दिनों की विस्तारित सीमावधि समाप्त होने के उपरांत प्रस्तुत किया गया हो, तो न्यायालय धारा 34(1) एवं 34(2) के अंतर्गत प्रस्तुत आवेदन को ग्रहण ही नहीं कर सकता।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

9. याचिकाकर्ता के अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत तर्क को उचित रूप से विवेचन के लिए, अधिनियम की धारा 34 और धारा 36 का पुनरुत्पादन करना उपयुक्त होगा, जो इस प्रकार हैं:-

" **34. माध्यस्थम् पंचाट अपास्त करने के लिए आवेदन**-(1) माध्यस्थम् पंचाट के विरुद्ध, न्यायालय का आश्रय केवल उपधारा (2) या उपधारा (3) के अनुसार, ऐसे पंचाट को अपास्त करने के लिए आवेदन करके ही लिया जा सकेगा ।

(2) कोई माध्यस्थम् पंचाट न्यायालय द्वारा तभी अपास्त किया जा सकेगा, यदि-

(क) आवेदन करने वाला पक्षकार यह सबूत देता है कि-

(**i**) कोई पक्षकार किसी असमर्थता से ग्रस्त था, या

(**ii**) माध्यस्थम् करार उस विधि के, जिसके अधीन पक्षकारों ने उसे किया है या इस बारे में कोई संकेत न होने पर, तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन विधिमान्य नहीं है ; या

(**iii**) आवेदन करने वाले पक्षकार को, मध्यस्थ की नियुक्ति की या माध्यस्थम् कार्यवाहियों की उचित सूचना नहीं दी गई थी, या वह अपना मामला प्रस्तुत करने में अन्यथा असमर्थ था ; या

(**iv**) माध्यस्थम् पंचाट ऐसे विवाद से संबंधित है जो अनुध्यात नहीं किया गया है या माध्यस्थम् के लिए निवेदन करने के लिए रख गए निबंधनों के भीतर नहीं आता है या

उसमें ऐसी बातों के बारे में विनिश्चय है जो माध्यस्थम् के लिए निवेदित विषयक्षेत्र से बाहर है :-

परन्तु यदि, माध्यस्थम् के लिए निवेदित किए गए विषयों पर विनिश्चयों को उन विषयों के बारे में किए गए विनिश्चयों से पृथक् किया जा सकता है, जिन्हें निवेदित नहीं किया गया है, तो माध्यस्थम् पंचाट के केवल उस भाग को, जिसमें माध्यस्थम् के लिए निवेदित न किए गए विषयों पर विनिश्चय है, अपास्त किया जा सकेगा ; या

(**v**) माध्यस्थम् अधिकरण की संरचना या माध्यस्थम् प्रक्रिया, पक्षकारों के करार के अनुसार नहीं थी, जब तक कि ऐसा करार इस भाग के उपबंधों के विरोध में न हो और जिससे पक्षकार नहीं हट सकते थे, या ऐसे करार के अभाव में, इस भाग के अनुसार नहीं थी ; या

(ख) न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि-

(**i**) विवाद की विषय-वस्तु, तत्समय प्रवृत्त विधि के अधीन माध्यस्थम् द्वारा निपटाए जाने योग्य नहीं हैं ; या

(**ii**) माध्यस्थम् पंचाट भारत की लोक नीति के विरुद्ध है ।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

स्पष्टीकरण-उपखंड (**ii**) की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, किसी शंका को दूर करने के लिए यह घोषित किया जाता है कि कोई पंचाट भारत की लोक नीति के विरुद्ध है यदि पंचाट का दिया जाना कपट या भ्रष्ट आचरण द्वारा उत्प्रेरित या प्रभावित किया गया था या धारा 75 अथवा धारा 81 के अतिक्रमण में था ।

(3) अपास्त करने के लिए कोई आवेदन, उस तारीख से, जिसको आवेदन करने वाले पक्षकार ने माध्यस्थम् पंचाट प्राप्त किया था, या यदि अनुरोध धारा 33 के अधीन किया गया है तो उस तारीख से, जिसको माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा अनुरोध का निपटारा किया गया था, तीन मास के अवसान के पश्चात् नहीं किया जाएगा :

परन्तु यह कि जहां न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि आवेदक उक्त तीन मास की अवधि के भीतर आवेदन करने से पर्याप्त कारणों से निवारित किया गया था तो वह तीस दिन की अतिरिक्त अवधि में आवेदन ग्रहण कर सकेगा किन्तु इसके पश्चात् नहीं ।

(4) उपधारा (1) के अधीन आवेदन प्राप्त होने पर, जहां यह समुचित हो और इसके लिए किसी पक्षकार द्वारा अनुरोध किया जाए, वहां न्यायालय, माध्यस्थम्

अधिकरण को इस बात का अवसर देने के लिए कि वह माध्यस्थम् कार्यवाहियों को चालू रख सके या ऐसी कोई अन्य कार्रवाई कर सके जिससे माध्यस्थम् अधिकरण की राय में माध्यस्थम् पंचाट के अपास्त करने के लिए आधार समाप्त हो जाएं, कार्यवाहियों को उतनी अवधि के लिए स्थगित कर सकेगा जो उसके द्वारा अवधारित की जाएं ।''

''**36. प्रवर्तन**-जहां धारा 34 के अधीन माध्यस्थम् पंचाट को अपास्त करने के लिए आवेदन करने का समय समाप्त हो गया है या ऐसा आवेदन किए जाने पर, उसे नामंजूर कर दिया गया है, वहां पंचाट, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) के अधीन उसी रीति से प्रवर्तित किया जाएगा मानो वह न्यायालय की डिक्री हो ! ''

10. *उच्चतम न्यायालय ने* **यूनियन ऑफ इंडिया विरुद्ध** पापुलर कंस्ट्रक्शन कंपनी **(उपर्युक्त)** प्रकरण *में पैराग्राफ 16 में निम्नानुसार प्रतिपादित किया है :-*

"16. इसके अतिरिक्त, धारा 34(1) स्वयं यह प्रावधान करती है कि मध्यस्थीय अधिनिर्णय के विरुद्ध न्यायालय में अवलंब केवल उसी स्थिति में लिया जा सकता है जब ऐसा आवेदन उप धारा (2) और उप-धारा (3) के *अनुरूप* प्रस्तुत किया गया हो। उप-धारा (2) निर्णय अपास्तिकरण के आधारों से संबंधित है और हमारी वर्तमान विवेचना के लिए सुसंगत नहीं है। परन्तु धारा 34 की उपधारा (3) में उल्लिखित अवधि के पश्चात प्रस्तुत किया गया कोई आवेदन उस उपधारा के "अनुरूप" नहीं माना जाएगा। फलस्वरूप, धारा 34(1) के अधीन न्यायालय में मध्यस्थीय निर्णय के विरुद्ध कोई उपाय निर्धारित अवधि के पश्चात नहीं किया जा सकता। धारा 34 में निर्धारित अवधि के महत्व को धारा 36 के प्रावधानों द्वारा बल दिया गया है, जो यह प्रदान करते हैं कि

'' जहाँ धारा 34 के अंतर्गत मध्यस्थीय अधिनिर्णय को निरस्त करने हेतु आवेदन करने की अवधि समाप्त हो गई है ... वहाँ वह निर्णय सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के अधीन उसी प्रकार प्रवर्तित किया जाएगा, जैसे कि वह न्यायालय की एक डिक्री हो।" यह 1940 के मध्यस्थता अधिनियम के प्रावधानों से एक महत्वपूर्ण विचलन है। 1940 अधिनियम के अंतर्गत, जब पंचाट को अपास्त करने की अवधि समाप्त हो जाती थी, तब न्यायालय को पंचाट के अनुसार निर्णय सुनाना आवश्यक होता था, और उस निर्णय के उदघोषणा पर एक डिक्री जारी होती थी' (धारा 17)। अब 1996 अधिनियम की धारा 34 के अंतर्गत समयावधि समाप्त होने का परिणाम यह है कि पंचाट बिना न्यायालय की किसी अतिरिक्त कार्यवाही के तुरंत प्रवर्तनीय हो जाता है। यदि धारा 34 में प्रयुक्त भाषा के निर्वचन को लेकर कोई शेष संदेह रह

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

भी जाए, तो 1996 अधिनियम की रूपरेखा इस विषय को न्यायालय की शक्तियों के सीमितकरण के पक्ष में हल करती है, क्योंकि यह परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के संचालन को अपवर्जित कर देती है।

11. उच्चतम न्यायालय द्वारा भी इसी मत को छत्तीसगढ़ राज्य विद्युत बोर्ड (उपर्युक्त) के प्रकरण में दोहराया गया था, जिसका पैरा 13 इस प्रकार है:-

"13. मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 34(3), जो विद्युत अधिनियम की धारा 125 के साथ मूलतः समान है, का निर्वचन यूनियन ऑफ इंडिया *बनाम* पापुलर कंस्ट्रक्शन कंपनी *(उपर्युक्त)* प्रकरण में किया गया। उस प्रकरण में विचाराधीन सटीक प्रश्न यह था कि क्या परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के प्रावधान मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 34 के अंतर्गत पंचाट को चुनौती देने वाले आवेदन पर लागू होते हैं। दो न्यायाधीशों की पीठ ने *मंगूराम बनाम म्यूनिशिपल कार्पोरेशन आफ दिल्ली* [1976 (1) एस सी सी 392], विद्या चरण शुक्ल *बनाम खूबचंद बघेल* [ए. आई.आर 1964 सुप्रीम कोर्ट 1099], हुकुमदेव नारायण यादव *बनाम एल.एन. मिश्रा* (उपर्युक्त), तथा *पटेल नरनभाई बनाम दुलाभाई गलबाभाई* [जेटी 1992 (4) सुप्रीम कोर्ट 381 : 1992 (4) एस सी सी 264] जैसे पूर्ववर्ती निर्णयों का उल्लेख किया और यह अभिनिर्धारित किया है कि :-

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

12. जहाँ तक 1996 अधिनियम की धारा 34 की भाषा का संबंध है, उपधारा (3) के प्रावधान में प्रयुक्त महत्वपूर्ण शब्द हैं — *"परन्तु उसके पश्चात नहीं"*। हमारे विचार में यह वाक्यांश परिसीमा अधिनियम की धारा 29(2) के अर्थ में एक *स्पष्ट अपवर्जन* है, और इस प्रकार यह अधिनियम की धारा 5 के अनुप्रयोग को निषिद्ध करता है। संसद को आगे जाने की आवश्यकता नहीं थी। यदि यह माना जाए कि न्यायालय प्रावधान में दी गई विस्तारित अवधि के पश्चात भी पंचाट को अपास्त

करने हेतु आवेदन स्वीकार कर सकता है, तो इससे *"परन्तु उसके पश्चात नहीं"* वाक्यांश पूर्णतः निरर्थक हो जाएगा। ऐसी परिणति को कोई भी निर्वचन का सिद्धांत उचित नहीं ठहरा सकता।

16. इसके अतिरिक्त, धारा 34(1) स्वयं यह प्रावधान करती है कि मध्यस्थीय पंचाट के विरुद्ध न्यायालय में उपाय केवल उसी स्थिति में किया जा सकता है जब ऐसा आवेदन उस निर्णय को अपास्त करने हेतु उपधारा (2) और उपधारा (3) के *अनुरूप* किया गया हो। उपधारा (2) पचांट को अपास्त करने के आधारों से संबंधित है और

हमारे प्रयोजन के लिए सुसंगत नहीं है। परन्तु धारा 34 की उपधारा (3) में उल्लिखित अवधि के पश्चात प्रस्तुत किया गया कोई आवेदन उस उपधारा के अनुरूप नहीं माना जाएगा। फलस्वरूप, धारा 34(1) के अधीन मध्यस्थीय पंचाट के विरुद्ध न्यायालय में उपाय निर्धारित अवधि से परे नहीं किया जा सकता। धारा 34 में निर्धारित अवधि के महत्व को धारा 36 के प्रावधानों द्वारा बल दिया गया है, जो यह प्रदान करते हैं कि:- ''जहाँ धारा 34 के अंतर्गत मध्यस्थीय अधिनिर्णय को अपास्त करने हेतु आवेदन करने की अवधि समाप्त हो गई है ... वहाँ वह निर्णय सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के अधीन उसी प्रकार प्रवर्तित किया जाएगा, जैसे कि वह न्यायालय का एक डिक्री हो'' यह 1940 के मध्यस्थता अधिनियम के प्रावधानों से एक महत्वपूर्ण विचलन है। 1940 अधिनियम के अंतर्गत, जब पंचाट को अपास्त करने की अवधि समाप्त हो जाती थी, तब न्यायालय को पंचाट के अनुसार निर्णय सुनाना आवश्यक होता था, और उस निर्णय के उदघोषणा पर एक डिक्री जारी होती थी' (धारा 17)। अब 1996 अधिनियम की धारा 34 के अंतर्गत समयावधि समाप्त होने का परिणाम यह है कि पंचाट बिना न्यायालय की किसी अतिरिक्त कार्यवाही के तुरंत प्रवर्तनीय हो जाता है। यदि धारा 34 में प्रयुक्त भाषा के निर्वचन को लेकर कोई शेष संदेह रह भी जाए, तो 1996 अधिनियम की रूपरेखा इस विषय को न्यायालय की शक्तियों के सीमितकरण के पक्ष में हल करती है, क्योंकि यह परिसीमा अधिनियम (की धारा 5 के संचालन को अपर्वजन कर देती है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

12.. उपर्युक्त प्रकरणो में उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रतिपादित अनुपात का अध्ययन करने पर यह पूर्णतः स्पष्ट हो जाता है कि उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि न्यायालय धारा 34(3) के प्रावधान में दी गई विस्तारित अवधि से परे पंचाट को अपास्त करने हेतु कोई आवेदन स्वीकार नहीं कर सकता। उच्चतम न्यायालय ने यह नहीं माना है कि यद्यपि अधिनियम की धारा 34(3) के प्रावधान के अंतर्गत विस्तारित अवधि के भीतर आवेदन प्रस्तुत किया गया है, तथापि यदि विलंब क्षमा हेतु आवेदन उक्त अवधि से परे प्रस्तुत किया जाता है, तो न्यायालय उपर्युक्त आवेदन को स्वीकार नहीं कर सकता और पंचाट अधिनिर्णय को अपास्त करने हेतु विचार नहीं कर सकता।

13. याचिकाकर्ता कोई ऐसा विधिक सिद्धांत इंगित नहीं कर सका जिससे यह माना जा सके कि अधिनियम की धारा 34 के अंतर्गत प्रस्तुत किया गया आवेदन, यदि विलंब क्षमा हेतु

आवेदन के बिना प्रस्तुत किया गया हो, तो उसे उस तिथि पर प्रस्तुत माना जाएगा जिस दिन विलंब क्षमा हेतु आवेदन प्रस्तुत किया गया था।

14. अधिनियम की धारा 36 के अंतर्गत, जहाँ धारा 34 के अधीन मध्यस्थीय पंचाट को अपास्त करने हेतु आवेदन करने की अवधि समाप्त हो गई है, अथवा ऐसा आवेदन किया गया हो और उसे अस्वीकार कर दिया गया हो, वहाँ वह निर्णय सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का अधिनियम संख्या 5) के अधीन उसी प्रकार प्रवर्तित किया जाएगा, जैसे कि वह न्यायालय की एक डिक्री हो।

15. धारा 34 में उपधारा (3) का परन्तुक सम्मिलित है। निर्विवाद रूप से, अधिनियम की धारा 34 के अंतर्गत आवेदन विस्तारित अवधि के भीतर प्रस्तुत किया गया है। केवल विलंब क्षमा हेतु आवेदन बाद की तिथि पर प्रस्तुत किया गया है, इससे यह नहीं कहा जा सकता कि पंचाट को अपास्त करने हेतु कोई आवेदन सांविधि में निर्धारित अवधि के भीतर प्रस्तुत नहीं किया गया है, और इस कारण न्यायालय को विलंब क्षमा करने अथवा आवेदन पर विचार करने का अधिकार नहीं है। विलंब क्षमा हेतु आवेदन प्रस्तुत करना एक प्रक्रिया संबंधी नियम है। यह ऐसा प्रकरण नहीं है कि बिना उत्तरवादी द्वारा विलंब क्षमा हेतु कोई आवेदन प्रस्तुत किए ही विलंब को क्षमा कर दिया गया हो।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

16. धारा 34(3) के परन्तुक के अनुसार, यदि न्यायालय इस बात से संतुष्ट है कि आवेदक पर्याप्त कारणवश तीन माह की निर्धारित अवधि के भीतर आवेदन करने से रोका गया था, तो न्यायालय अतिरिक्त तीस दिनों की अवधि के भीतर आवेदन स्वीकार कर सकता है, *परन्तु उसके पश्चात नहीं* । 'आवेदन' शब्द का तात्पर्य अधिनियम की धारा 34 के अंतर्गत प्रस्तुत आवेदन से है, न कि विलंब क्षमा हेतु प्रस्तुत आवेदन से। उपर्युक्त दृष्टिकोण में, प्रस्तुत आधार निरर्थक है। विचारण न्यायालय ने अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करते हुए विलंब को सांविधि द्वारा प्रदत्त सीमा के भीतर उचित रूप से क्षमा किया है।

17. उपर्युक्त कारणों के आधार पर, याचिका में कोई गुण नहीं है। अतः यह याचिका खारिज किए जाने योग्य है और इसे खारिज किया जाता है। वाद व्यय के संबंध में कोई आदेश पारित नहीं किया जाता।

सही/-

एन.के.अग्रवाल

न्यायाधीश

अस्वीकरणः हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।

Translated By- अजय कुमार अग्निहोत्री अधिवक्ता

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur